International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197
Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2017; Page No. 983-985

मानवतावादी कबीर की सामाजिक चेतना

वीरेन्द्र सिंह

एम०ए०बी०एड०, जे०आर०एफ०, नेट, जखाला, गुड़ियानी, कोसली, रेवाड़ी, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

संत कबीरदास का भारतीय समाज तथा संत साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान है। देश में कबीरदास की विशिष्ट भूमिका रही है। मध्यकाल में भारत में अनेक सामाजिक समस्याएँ अपनी जड़े जमा चुकी थीं। धार्मिक रूढ़ियां, अंधविश्वास, ऊँच-नीच, वर्ण व्यवस्था, हिन्दू-मुस्लिम झगड़े अपनी चरम सीमा पर थे। ऐसे समय में कबीर का जन्म हुआ। संत कबीरदास के जन्म के समय भारत की राजनितिक, सामाजिक, आर्थिक एवम् धार्मिक दशा शोचनीय थी। एक तरफ जनता मुस्लमान शासको धर्मान्धता से दुखी थी तो दूसरी और हिन्दू धर्म के कर्मकांड और पाखंड से धर्म का पतन हो रहा था। संत कबीर उस समय अवतरित हुए जब मध्यकाल घोर निराशा एवम् अंधकार से घिरा हुआ था। छुआछुत, रूढ़िवादिता का बोलबाला था और हिन्दू-मुस्लमान आपस में दंगा फसाद करते रहते थे। धर्म के ठेकेदार अपने स्वार्थ की रोटिया धार्मिक कट्टरता एवम् उन्माद के चूल्हे पर सेक रहे थे। कबीर ने इसका डटकर विरोध किया और समाज में फैली सामाजिक बुराइयों को दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने अपनी बात निर्भीकता से कही तथा हिंदूओ और मुसलमानो को डटकर फटकारा। भारतीय साहित्य में कबीर संत शिरोमणि थे। संत शब्द का शाब्दिक अर्थ है - सज्जन व्यक्ति। यह सब्द सुनते ही हमारे दिमाग में साधु-महात्माओ के चित्र चित्रित हो जाते है। संस्कृत-हिंदी शब्दकोष के अनुसार " 'संत 'शब्द 'सत् 'शब्द का बहुवचन है।

'उत्स' धातु से निष्पन-'सत्' शब्द का पुल्लिंग, प्रथम विभक्ति एकवचन का रूप 'सन्' है। इसमें 'शतृ' (अत्) प्रत्यय लगा है। इस प्रकार संत शब्द सत्य का पर्यायवाची बन जाता है। 1 इस प्रकार संत शब्द का अर्थ हुआ - जिसे सत्य की अनुभूति हो चुकी है। संस्कृत भाषा में संत शब्द का अर्थ है – "महात्मा"। [2] गरीब दास ने संत की तुलना ब्रह्मा से की है - " साई सरीखे संत मैं यामे मीन न मेख।"[3] समाज राष्ट्र एवम् साहित्य में कबीर की छवि क्रमश: समाज सुधारक, धार्मिक एवम् रहस्यवादी कवि के रूप में प्रसिद्ध है। संत काव्य परम्परा में कबीर प्रभावशाली वक्तित्व वाले संत पुरुष थे। उनको संत साहित्य का देदीप्यमान नक्षत्र कहना कोई अतिशोयक्ति नहीं है।

कबीर के युग में मुसलमान शासकों ने जनता पर अनेक दुराचार किये जिनके कारण कबीर के समय में धर्म, दर्शन, कला-साहित्य, संस्कृति, राजनीति और समाज नीति का सामन्तिकरण हो गया था। हिंदी साहित्य के इतिहास का यह समय अस्त - व्यवस्ता, असफलता, उत्पीड़न, संघर्ष और शोषण का था। समाज दिशाहीन और पतित होता जा रहा था। इस घोर निरशा के जीवन में मनुष्य जीवन-जीने में कोई रूचि नही ले रहा था।

संत किसी संप्रदाय या पंथ विशेष सम्बन्धित न होकर सम्पूर्ण समाज के होते है। वे समाज के कल्याण हेतु अपना सर्वसव अर्पण कर देते है। कबीर तत्कालीन समाज व्यवस्था से असंतुष्ट थे। इस असंतोष का कारण था समाज में फैली सामाजिक बुराइयाँ। कबीर ने अपने क्रांतिकारी विचारों दवारा इनको सुधारने का स्तुल्य प्रयास किया, यह उनकी सामाजिक तथा मानवीय चिंता थी। कबीरदास मानवता के पर्याय थे। वे मानवतावादी आस्था के साथ समाज में सुधार लाना चाहते थे। कबीर की मानवतावादी दृष्टि और समकालीन युग में प्रांसगिकता के सम्बन्ध में डॉक्टर बलदेववंशी कहते है कि - "कबीर के पास कालजयी सोच के साथ मानवतावादी सिद्ध दृष्टी और समुद्र से गहरी संवेदना है। मानव - मुक्ति के लिए विस्तीर्ण आकाश जैसा विश्वास है तो अस्तित्व रक्षा के लिए रक्षा अगाध __मयी शस्य-श्यमला अक्षय जीवनों कोशमयी धरती। कबीर प्रेम और करुणा के अवतार है। धरती के अंतिम प्राणी और प्रगति की निष्कलुष वाणी है। महलो की बेचैनी और शोषण के सामने खड़े हुए झोपडी का संतोष और ईमान है।" [4]

कबीर का समाज प्रमुख्त: साधारण - अनपढ़, अज्ञानी और पीड़ित लोगो का समाज था। इसलिए उन्होंने अपनी कविता में सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है। "भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा, उसे उसी रूप में कहलवा लिया - बन गया है तो सीधे-सीधे, नहीं दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार-सी नज़र आती है।" [5]

कबीर सही अर्थो में समाज- सुधारक थे। उनके काव्य में समाज सुधार की भावना उनके स्थलों पर मिलती है। यह भावना ही उनके समाज - दर्शन की अभिव्यक्ति करती है।

> कबीर ने हिन्दू तथा मुसलमानो को पाखंड पर जमकर लताड़ा –
> काकर - पाथर जोरि करै, मस्जिद लई बनाई,
> ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय।

लोग मस्जिद में चढ़कर जोर-जोर से आवाज देकर क्या सिद्ध करना चाहते है ? ईश्वर बहरा नहीं है। कबीर को आडम्बर प्रिय नही था :-

> न हम पूजै देवी-देवता, ना हम फूल चढ़ाई
> ना हम मूरत धरै सिंहांसन, ना हम घंटा बजाई।

कबीर ने मूर्ति पूजा का खंडन किया और मन - मंदिर में ही ईश्वर का निवास बताया। उन्होंने कहा है –

पत्थर पूजै हरि मिले, तो मैं पुजू पहार,
ताते या चाकी भलि पीस खाये संसार।

अन्यत्र स्थान पर कबीर ने लिखा है –

दुनिया ऐसी बावरी, पाथर पूजन आई,
घर की चाकी कोई ना पूजै, जाकी पिसी खाई।

यदि पत्थर को पूजने से भगवान मिलते तो मैं पहाड़ की पूजा करूँगा। इससे अच्छा तो यह है की हम घर की उस चक्की को पूजे जिसका पिसा हुआ हम खाते है। यह हमारे उपयोग की वस्तु तो है।

इस सम्बन्ध में देवप्रकाश मिश्र ने लिखा है कि - "कबीर ने प्राचीन जर्जर परम्पराओ - पौराणिक हिन्दू मंत्रो, आडम्बरो, पाखंडो तथा अंधविश्वासों का ही विरोध नहीं किया बल्कि मुसलमानो की आडम्बरपूर्ण परम्पराओ का भी खंडन किया था। कबीर ने मानवता तथा सामाजिक समता की उद्घोषणा करते हुए समझाया कि इन पंडितो, काजियों और मुल्लाओ को अपनी मुक्ति के रास्ते का ज्ञान नही फिर वो कैसे दूसरो को रास्ता सुझायंगे।" [6]

कबीर ने अवतारवाद का खंडन किया है - वे जानते थे की अवतारवाद के नाम पर पण्डे - पुरोहित जनता को ठग रहे है। वे राम को दशरथ पुत्र न मानकर निर्गुण ब्रह्मा मानते है :-

दशरथ सूत तिहु लोक बखाना, राम नाम का मरम न जाना।
अन्यत्र स्थान पर कबीर लिखते है :-
"मेरा साहब एक है, दूजा कहा न जाय,
साहिब दुजा जो कहु, साहब खरा रिसाय।"

कबीर ने हिंसा का विरोध हर स्तर पर किया है। चाहे वह जीभ के स्वाद के लिए की गयी हो या धर्म के नाम पर की जा रही हो। मुसलमान दिन में रोजा और रात को गाय की कुर्बानी देते है, ये दोनों विरोधी कार्य है। इससे भला खुदा कैसे प्रसन्न हो सकता है। कबीर ने लिखा है -

दिन में रोजा रखत है, राति हनत है गाय,
यह तो खून वह बंदगी, कैसे खुशी खुदाय।

कबीर ने पुस्तकीय ज्ञान का खंडन किया है। कबीर शास्त्र - ज्ञान की बजाय आचरण की शुद्धता पर बल देते है। कबीर के अनुसार लोगों की कथनी और करनी एक समान होनी चाहिए। कबीर ने कहा है कि –

पोथि पढ़ि -पढ़ि जग मुआ पंडित भया न कोय, ढाई आखर प्रेम का पढ़ें सो पंडित होय

कबीर ने कंचन और कामिनी को साधनामार्ग मे बाधक बताया है। उनका मानना है कि नारी मनुष्य को अध्यात्मक एवम् सदमार्ग पर चलने से रोकती है। यह बात भी तत्कालीन आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में कही और समझी जानी चाहिए। वास्तव में वे नारी के माध्यम से अतिशय वासना की निंदा करते है :-

नारी की झाई परत, अँधा होत भुजंग,
कबीरा तिनकी कोन गति, जो नित नारी संग।

कबीर ने सार ग्रहण की प्रकृति पर बल दिया दिया है। उनका मत है कि हमें अच्छी-अच्छी बातो को ग्रहण करना चाहिए तथा बुरी बात का त्याग करना चाहिए। जीवन का यही लक्ष्य रहे तो ठीक है। भले ही हम ठग जाए, किन्तु दूसरे को कभी ने ठगे यही कबीर के जीवन का आदर्श है।

कबीर ने अपने समय में फैली छुआछुत की भावना पर तीक्ष्ण प्रहार किया है। जाति प्रथा की भावना के वे कट्टर विरोधी थे। कबीर का युग सामाजिक बुराइयों का युग था। वे कहते है की ऊँचे कुल में जन्म लेने मात्र से कोई ऊँचा नही हो जाता। ऊँचा वह है जिसकी करनी अच्छी हो। यदि स्वर्ण कलश मदिरा से भरा हो तो भी वह निंदनीय है :-

ऊँचे कुल का जनमिया, जै ऊँच करन न होइ,
सुबरन कलश सुरा, साधू निंदा होइ।

कबीर ने राम-रहीम, केशव-महादेव, मोहम्मद की एकता पर बल दिया है। उन्होंने सम्पूर्ण समाज को एकता के सूत्र में बाँधने का प्रयास किया है। कबीर ने समझाया की हिन्दू-तुरक दोनों का एक ही मार्ग है –

हिन्दू-तुरक एक रहा है, सतगुरु यह बताई।

इस सम्बन्ध में देवप्रकाश मिश्र जी कहते है की -- "मनुष्यता को पहचानने के सम्बन्ध में कबीर महामानव थे। मानवता पोषक किसी भी जाति धर्म से उनकी मित्रता हो सकती थी। मानवता की विघटनकारी शक्तियो से उनकी दुश्मनी थी। जहा वे एक ओर पंडित और योगी को फटकारते है वही दूसरी ओर मौलवी और फ़क़ीर की खबर लेने में उन्हें फक्र का अनुभव होता था।" [8]

इस प्रकार कबीर एक महान समाज-सुधारक, सत्यधर्म के प्रतिपादक, समन्यवादी तथा क्रांतिकारी थे। वे समाज में प्रचलित प्रत्येक प्रकार की असमानता, बाह्याचार और ढोंग को समाप्त करना चाहते थे। यह काम स्पष्ट वक्ता, दृढ-विवेकी और निर्भीक व्यक्ति ही कर सकता था। कबीर को किसी का भय नही था। वे तो घर फूंककर तमाशा देखने वालो में थे। वास्तव में ऐसा व्यक्ति ही उच्च निर्माण कर सकता है। तभी तो कबीर ने घोषणा की थी कि :-

कबीरा खड़ा बाजार में, लिए लुकाठी हाथ,
जो घर फूंके आपणा, चलै हमारे साथ।

सारांशत:

निश्चय ही कबीर का व्यक्तित्व क्रांतिकारी चेतना से पूर्ण था। उन्होंने अपने समय में निर्भिकतापूर्ण समाज-सुधार का प्रयास किया, वह अद्वित्य है। वर्तमान युग के तथाकथित समाज-सुधारक भी ऐसा साहस नही दिखा सके, जो कबीर ने धार्मिक उन्माद से ग्रस्त तत्कालीन युग में दिखाया था। एक सच्चे युग पुरुष की भाँति उन्होंने सदियो से अन्धविश्वसो, अनीति, अनाचारो एवम् दोषो पर

प्रबल प्रहार करते हुए समाज को सही दिशा - निर्देश देने का प्रयास किया। निश्चय ही ऐसा करके उन्होंने अपने गंभीर दायित्व का निर्वहन किया। इस कार्य में उन्हें कहा तक सफलता मिली है, इसका निर्णय तो सुधि इतिहासज्ञ ही कर सकते है। अत: हम कह सकते है कि कबीर वास्तव में एक मानवतावादी समाज-सुधारक थें। इस कार्य कें लिये समाज सदा उनका ऋणी रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ० विमल मेहता, निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, पृ० 12
2. पं० रामसुंदर शर्मा, संस्कृत-कोष सुधा, पृ० 498
3. डॉ० पी० जयरामन, संत-वाणी-संग्रह (भाग-1) वेलबेड़ियार प्रेस प्रयाग, पृ० 12
4. डॉ० बलदेव वंशी, आध्यात्मिक वैश्विकरण और कबीर, कबीर: एक पुर्नमूल्यांकन, पृ० 14
5. आचार्य हज़ारी प्रसाद् द्विवेदी-कबीर ग्रंथावली
6. ''मसि कागद छुयौं नही - - - - - " कबीर, देव प्रकाश मिश्र पृ० 36
7. अयोध्या सिंह उपाधयाय 'हरिऔध' कबीर रचनावली पृ० 2 (20)
8. ''मसि कागद छुयौं नही - - - - - " कबीर, देव प्रकाश मिश्र पृ० 37